पंजीयन क्रमांक 04/14/08825/06
ISSN-0975-2560

पारमिता

(वर्ष 8, अंक 8)

दर्शन-परिषद्

(मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़)

प्रबंध सम्पादक
डॉ. विनोद कुमार कटारे

सम्पादक
डॉ. प्रदीप कुमार खरे

प्रो. संगमलाल पाण्डेय स्मृति व्याख्यान माला 2015 में प्रस्तुत।

अद्वैत दर्शन तथा पलायनवाद

डॉ0 अखिलेश्वर प्रसाद दुबे
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
दर्शनशास्त्र विभाग,
डॉ0 हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भारतीय दर्शन परम्परा में अद्वैत वेदान्त का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस दर्शन की विशेषता है कि यह मात्र ब्रह्म को ही एकमात्र सत्य मानता है। सम्पूर्ण दर्शन इस सूत्रवाक्य *'ब्रह्म सत्यम् जगत् मिथ्या जीवो ब्रह्मै व नापरः।'* अर्थात् ब्रह्म ही एकमात्र सत्य है। जगत् मिथ्या है तथा जीव और ब्रह्म अभिन्न हैं – से व्यक्त होता है। शंकर के दर्शन में विश्व को गौण मानकर इसकी व्याख्या की गई है, जिसमें विश्व पूर्णतः सत्य नहीं है। ब्रह्म को एकमात्र सत् मानने के कारण ही यह विचारधारा अद्वैतवाद कहलाती है। शंकर ने जगत् को रस्सी में दिखाई देने वाले सर्प के समान माना है। यद्यपि जगत् मिथ्या है फिर भी जगत् का कुछ न कुछ आधार है। जिस प्रकार रस्सी में दिखाई देने वाले साँप का आधार रस्सी है उसी तरह विश्व का आधार ब्रह्म है। शंकर कहते हैं – ब्रह्म विश्व का अधिष्ठान है। जिस प्रकार सॉप रस्सी के वास्तविक स्वरूप पर पर्दा डाल देता है उसी प्रकार जगत् ब्रह्म के वास्तविक स्वरूप पर आवरण डाल देता है और उसके रूप का विक्षेप जगत् यथार्थ प्रतीत होने लगता है। शंकर के अनुसार सम्पूर्ण जगत् ब्रह्म का विवर्त उसी प्रकार है जिस प्रकार रस्सी का विवर्त सर्प है। ब्रह्म सत्य है। विश्व असत्य है। अतः शंकर विवर्तवाद का समर्थन करते हैं, यदि यह परिवर्तनशील संसार आभास मात्र है तब इस संसार को जादूगर के खेल की तरह समझा जा सकता है। जिस प्रकार जादूगर की प्रवीणता से हम उसके खेल से प्रभावित होते हैं किन्तु स्वयं जादूगर अपने जादू की कला से प्रभावित नहीं होता, उसी प्रकार ब्रह्म भी माया से जगत् की सृष्टि करता है और स्वयं उससे अप्रभावित रहता है। शंकर ने विश्व को स्वप्न कहा है। जिस प्रकार स्वपन की अनुभूतियाँ हमें स्वपनकाल में ठीक प्रतीत होती हैं उसी प्रकार जब तक हम विश्व में अज्ञान के वशीभूत निवास करते हैं विश्व यथार्थ प्रतीत होता है।[1] जिस प्रकार स्वपन की अनुभूतियों का खण्डन जागृत् अवस्था में हो जाता है उसी प्रकार विश्व की अनुभूतियों का खण्डन मोक्ष प्राप्त करने के बाद अपने आप हो जाता है। यद्यपि शंकर ने विश्व को स्वपन माना है, फिर भी वह स्वपन और संसार के बीच विभेदक रेखा खींचता है।